'स्व' के संसार में विश्व शान्ति का उपहार

एक कहावत है कि शान्ति गले का हार है। एक रानी थी और वह अपने गले में नौलखा हार पहनती थी जब वह रोज स्नान करने जाती थी तो उसे अपने घर में खूंटी पर टांग देती थी। एक दिन वह अपनी सहेलियों के साथ दूर नदी में स्नान करने गयी और उस दिन अपना हार उतार नहीं बल्कि वह पहनकर गयी। स्नान करने के बाद प्रतिदिन की भांति वह अपना हार उस खूंटी पर लेने गयी जहाँ प्रतिदिन उसको रखती थी। वह यह भूल गयी थी कि हार तो उसने अपने गले में पहन रखा हे। वह परेशान हो उठी और पूरे राज्य में ढिंढोरा पिटवा दिया कि जो भी रानी का नौलखा हार देगा उसको उचित इनाम दिया जायेगा। जब उसकी नौकरानी से पूछा गया कि हार यहां रखा गया थ वह कहाँ गया तो उसने बड़े प्यार से उत्तर दिया कि महारानी जी हार तो आपके गले में पड़ा है, तब उसको याद आ गया कि हार तो उसके गले में ही है।

इसी तरह मनुष्य एक शरीर नहीं आत्मा है और आत्मा का अनादि आदि स्वधर्म शान्ति है। परन्तु कालान्तर में भौतिकता की चकाचौंध में मनुष्य देह अभिमान में आने से आज वह मन्दिरों, मस्जिदों, गुरूद्वारों में मन की शान्ति के अन्य उपाय ढूंढ.रहा है। यह एक कस्तूरी अथवा मृगतृष्णा के समान है। कस्तूरी मृग के अन्दर होती है परन्तु उसे वह बाहर जंगल में इधर-उधर भटकता ढूंढ़ता है। यही स्थिति आज मुनष्य की है। बाहर शान्ति ढूंढ़ते-ढूढ़ते न जाने कितने आयोजन, प्रायोजन और समायोजन करता है, परन्तु उसे निराशा के अलावा कुछ भी प्राप्त नहीं होता है। जब तक बीज को उचित पानी, हवा और वातावरण उपलब्ध नहीं होता है, तब तक वह फल नहीं देता है। ऐसे ही देह अभिमानवश संगदोष, बुराईयों के वशीभूत होकर किये गये विकर्मो के कारण मनुष्यात्मा की शक्ति क्षीण हो गयी है।

सभी मनुष्यात्माओं का वास्तविक घर परमधाम है जिसको शान्तिधाम अथवा ब्रह्मलोक भी कहते है जहाँ आत्मा अपने वास्तविक परमशान्ति स्वरूप में होती है। वहाँ न तो शरीर होता है और नहीं आवाज। इसलिए उसको आवाज से परे की दुनियां कहते है। यह सृष्टि एक रंग मंच है जहाँ आत्मायें अनेक शरीर रूपी चोले में अलग-अलग धर्म, जाति, वर्ण, सम्प्रदाय में पार्ट बजा रही है। जब आत्मा पहले-पहले इस सृष्टि पर आती है तो उसमें सतोप्रधानता होने के कारण सतयुग और त्रेतायुग में मनुष्य दैवी गुणों से सम्पन्न होता है जिन्हें देवताओं के नाम से जाना जाता है जो पूज्यनीय है। वहाँ एक मत, एक भाषा, एक धर्म तथा एक राज्य होता है। वहाँ शेर और गाय एक घाट पर पानी पीते है। वैर भाव हिंसा, विकारों का नामोनिशान नहीं होता है। सम्पूर्ण विश्व में शान्ति होती है।

यही कारण है कि आज मनुष्य आर्थिक और भौतिक संसाधनों से सम्पन्न होते भी उसे उसी शान्ति और सुख की खोज रहती है जो आत्मा के आदि और अनादि काल में थी। भौतिक सुख के साधनों से कुछ क्षणों के लिए स्वयं को सान्त्वना दे तो देते है परन्तु सच्ची शान्ति और सुख की ललक और बढ़ती जाती है। आज बढ़ते, अत्याचार, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता का कारण आत्म-विस्मृति है। सर्वशक्तिवान परमात्मा शिव एक है और सभी मनुष्यात्मायें आत्मिक रूप में भाई-भाई, उसकी दिव्य संतान है। इसका एहसास एवं पहिचान न होने के कारण मनुष्य वैर विरोध, आपसी वैमनस्यता, घृणा तथा बुराईयों के दलदल में फंसता जा रहा है। इसी विस्मृति ने जाति भेद, रंग भेद, धर्म भेद, लिंग भेद, ऊंच-नीच को जन्म दिया है। आसुरीयता और पाश्विक वृत्ति के कारण आज असोचनीय ह्दयविदारक जैसी समस्याओं का जन्म हो रहा है।

मनुष्य की सोच और स्थिति से प्रकृति भी प्रभावित होती है। जब मनुष्य सतोप्रधान स्थिति में होता है तो प्रकृति भी सतोप्रधान होती है। जब मनुष्य तमोप्रधान की स्टेज पर पहुँचता है तो प्रकृति के पांचों तत्व भी उससे प्रभावित होते है। आज बढ़ती प्राकृतिक आपदाएं, बाढ़, भूकम्प तूफान भी मनुष्य की गलत, विध्वंसक, नकारात्मक

सोच का एक हिस्सा है। इन समस्याओं से प्रभवित इलाकों के लिए जब लोग द्वेष की भावना के कारण न तो मदद ले सकते हैं और न मदद दे सकते है तो प्रकृति आपकी मदद कैसे कर सकती है। इसलिए इन भयानक समस्याओं के स्थायी हल और विश्व शान्ति के लिए हमें सबसे पहले स्वयं में, परिवार, समाज औद देश में शान्ति लानी होगी तभी पूरे विश्व में शान्ति हो सकती है। जब हम बदलेंगे, परिवार बदलेगा फिर समाज और देश बदलेगा तभी यह प्रक्रिया विश्व शान्ति की ओर अग्रसर होगी। जब हम स्वयं को सदगुणों से आलेकित करेंगे तभी विश्व आलोकित होगा।

इसी सन्दर्भ में आध्यात्मिक महोत्सव, पर्व, जयन्तियां बहुत मददगार सिद्ध होते हैं जो मनुष्यात्मा को आध्यात्मिकता के विभिन्न स्त्रोतो से किसी न किसी रूप में जोड़ते है। इनका आयेाजन इस रूप में किया जाए जिससे सभी धर्म और सम्प्रदायों के लोग इकट्ठे होकर आत्मविश्लेषण करें और जाति, धर्म का भेदभवा मिटे तथा विश्व बन्धुत्व का उदय हो। आत्म खोज एक शक्ति का निर्माण करती है जिसको धारण करने वाला मनुष्य दु:ख, सुख, मान-अपमान में समान रहता है। वह भेदभाव से परे हो जाता है। इसका जीवंत उदाहरण ब्रह्माकुमारी संस्था के अनुयाईयों में देखा जा सकता है। यहाँ पर आध्यात्मिक ज्ञान, शाश्वत मूल्यों और गीता में वर्णित राजयोग ध्यान को अपनाने की प्रेरणा दी जाती है। जिससे जीवन में एक ऐसा परिवर्तन होता है जो दैवी गुणों का पथिक बना देता है। इस मार्ग पर चलने वाले लाखों करोड़ों लोग इसके साक्षी है।

आज के समय में विकारों की आंधियां चल रही है। ऐसे में मनुष्य को अपने आप को समायोजित करना कठिन है। इसलिए आज के सन्दर्भ में अनेक कार्यक्रम तो अयोजित किये तो जाते है परन्तु उसपर अमलीकरण नहीं हो पाता है। इसका कारण आन्तरिक कमजोरी है। आध्यात्मिक ज्ञान और राजयोग ध्यान से यह बिल्कुल सहज हो जाता है। आप के सोचने की भी एक दिशा होनी चाहिए। सोचने में भी हमारी शक्ति क्षीण तथा एकत्रित होती है। आंखों से देखने में, बोलने में भी उॅर्जा का संचयन तथा विघटन होता है। इसलिए हमें आज के संसार में रहने तथा एक श्रेष्ठ जीवन जीने के लिए अपने मन, बचन और कर्म की भी दिनचर्या निर्धारित कर लेना चाहिए। इसके लिए विल पावर की आवश्यकता होती है। यह राजयेाग के माध्यम से बहुत जल्दी ही पाया जा सकता है। बहुत से लोगों ने इसको अपनाकर अपने जीवन में इन मूल्यों को पल्लवित किया है।

स्व का संसार सबसे बड़ा संसार: कबीर दास ने कहा कि **जिन ढूढ़ा तिन पाईयां गहरे पानी पैठ, मैं कबीरा बूड़न डरा रहा किनारे बैठ।** जिन लोगों ने मन के विराट सागर की गहराई में जाकर हीरे मोती ढूढ़ने की कोशिश की उन्होंने अमूल्य चीजो को पाया है। जो आज पूरे विश्व में आदर्शमूत्त है। परन्तु जो इस डर से दूर रहे कि हम इस दुनियां से दूर हो जायेंगे और मन सागर में डूब जायेंगे वे आज रसातल के तरफ जा रहे है। यह राजयोग ध्यान मन के सागर में जाना का मार्ग प्रशस्त करता है। इसलिए आईये हम भी अपने मन रूपी संसार में डुबकी लगाकर अपने जीवन को संवारें।

- ब्रह्माकुमारीज् वार्ता फिचर्स
www.bkvarta.com